International Journal of Applied Research 2017; 3(10): 340-342

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2017; 3(10): 340-342
www.allresearchjournal.com
Received: 12-08-2017
Accepted: 16-09-2017

डॉ0 अशोक कुमार दुबे
एसोशिएट प्रोफेसर–संस्कृत,
बी0एस0एन0वी0 पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ, उत्तर प्रदेश, भारत।

Correspondence
डॉ0 अशोक कुमार दुबे
एसोशिएट प्रोफेसर–संस्कृत,
बी0एस0एन0वी0 पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ, उत्तर प्रदेश, भारत।

भारतीय संस्कृति में सूर्य का अस्तित्व

डॉ0 अशोक कुमार दुबे

प्रस्तावना

रूपं यदेतद् बहुधा चकास्ति यद्येन भावी भविता न जातु। तच्चक्षुरर्कात्मकमीश्वरस्य वन्दे वपुस्तैजससारधाम्नः।।

भारतीय संस्कृति में आरम्भ से ही सूर्यकी महिमा अतिशय रही है। वह भारतीय आध्यात्मिक जीवन का उच्चतम आदर्श प्रस्तुत करती है। स्वामी रामतीर्थके शब्दोंमें सूर्य सबसे बड़े संन्यासी हैं; क्योंकि वे सबको प्रकाश और जीवन प्रदान करते हैं। प्रकाश देने का काम आचार्य का है। वैदिक कालमें ही सूर्यको आचार्यरूप में प्रतिष्ठा प्राप्त हुई थी। भगवान् सूर्य ने याज्ञावल्क्य को वाजसनेयीसंहिता का उपदेश दिया था। गायत्री के 'धियो योनः प्रचोदयात्' के द्वारा सूर्य का गुरूत्व ब्रह्मचारी और आचार्य के सम्बन्धमें प्रस्फुटिक हुआ है। वैदिक युग से ही उपनयन में अपनी और विद्यार्थी की अंजलि जल से भरकर आचार्य के मन्त्र पढ़ने की विधि रही है; यथा–

तत् सवितुर्वृणीमहे वयं देवस्य भोजनम्। श्रेष्ठं सर्वधातमं तुरं भगस्य धीमहि।।[1]

अर्थात्–'हम सवितादेव के भोजन को प्राप्त कर रहे हैं। यह श्रेष्ठ है, सबका पोषक और रोगनाशक है।' यह मन्त्र पढ़कर आचार्य अपने हाथ का जल विद्यार्थी को अंजलि में डाल देते और उसका हाथ अँगूठेसे पकड़ लेते थे। इसके पश्चात् आचार्य कहते थे–

देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्यां गृभ्णाम्यसौ।

'सविता देव के अनुशासन में अश्विद्वय की बाँहों से तथा पूषा के हाथोंसे मैं तुम्हारा हाथ पकड़ता हूँ।' इस प्रकार शिष्य और आचार्य के सम्बंध में सूर्य की उपस्थिति प्रमाणित होती थी और यह सिद्ध किया जाता था कि जैसे सूर्य प्रकाश देकर जगत्का अन्धकार निरन्तर दूर करते हैं वैसे ही आचार्य शिष्य का अज्ञानान्धकार दूर करते रहेंगे। इस अवसर पर सूर्य से प्रार्थना की जाती थी–

'मयि सूर्यो भ्राजो दधातु– 'अर्थात्–'सूर्य मुझमें प्रकाश की प्रतिष्ठा करें।'

सूर्य से आजीवन कर्मयोगकी शिक्षा प्राप्त होती है। सूर्य शब्द की व्युत्पत्ति है–सुवति प्रेरयति कर्मणि लोकम् अर्थात् सूर्य यतः लोक को कर्म में लगा देते हैं अतः 'सूर्य' हैं। सूर्य को निष्काम कर्म की प्रेरणा परमात्मस्वरूप भगवान् श्रीकृष्ण से मिली जैसा कि गीता में उन्होंने स्वयं कहा है। सूर्य के सात अश्वों द्वारा निष्काम कर्म योग का चारित्रिक आदर्श प्रस्तुत किया गया है। उनके नाम ये हैं–

जयोजयश्च विजयो जितप्राणो जितश्रमः।
मनोजवो जितक्रोधो वाजिनः सप्त कीर्तिताः।।[2]

परम्परा भी सूर्यवंश में निष्काम कर्मयोग और आत्मज्ञान की शेवधि (कोष) रही हैं। सूर्य के पुत्र यम से नचिकेता ने कर्मयोग की शिक्षा प्राप्त की थी।
सूर्य की उपर्युक्त विशेषताओं के आधार पर पौराणिक युग में सौर–सम्प्रदाय का प्रवर्तन हुआ। किसी देवता के नाम पर सम्प्रदाय बनना तभी सम्भव होता है, जब वह सृष्टि का कर्ता हो, उससे सारी सृष्टि का उद्भव होता हो और अन्त में उसमें सारी सृष्टि विलय भी हो जाता हो। इसकी पुष्टि सूर्योपनिषद् में प्राप्त होती है। ऋग्वेद में भी इस धारणा का परिपाक हुआ है। उसके अनुसार–

सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च।

ऋग्वेद में सूर्य का नाम विश्वकर्मा मिलता है। इससे उनकी सृष्टि–रचना की योग्यता प्रमाणित होती है।
सूर्योपनिषद् में सूर्य का वह स्वरूप स्पष्ट रूप से वर्णित है, जिससे वे सबका उद्भव और विलय का आश्रय प्रतीत होते हैं। देखिये–

सूर्याद् भवन्ति भूतानि सूर्येण पालितानि तु।
सूर्य लयं प्राप्नुवन्ति यः सूर्यः सोऽहमेव च।।

अर्थात्–'सूर्य से सभी भूत उत्पन्न होते हैं, सूर्य सबका पालन करते हैं और सूर्य में सबका विलय भी होता है। जो सूर्य हैं, वही मैं हूँ।'
उपनिषदों में आदित्य को सत्य मानकर उन्हें ब्रह्म बताया गया है। इस प्रकार चाक्षुष पुरुष की आदित्य पुरुष से अभिन्नता है; यथा–

तद् यत्तत् सत्यमसौ स आदित्य य एष एतस्मिन्
मण्डले पुरूषोयश्चायं दक्षिणेऽक्षन पुरुषस्तावेतावन्योन्यस्मिन् प्रतिष्ठितौ।[3]

'यह सत्य आदित्य हैं। जो इस आदित्यमण्डल में पुरूष हैं और जो दक्षिण नेत्र में पुरूष है, वे दोनों पुरूष एक–दूसरे में प्रतिष्ठित हैं।
इस प्रकार अधिदैव आदित्य पुरुष और अध्यात्म चाक्षुष पुरुष का अन्योन्याश्रय सम्बन्ध बताकर सूर्य को प्रथम उद्भव बताया गया है। अथर्ववेद के अनुसार सूर्य सबके नेत्र हैं।
इसके पीछे उपनिषद् दर्शन है–'आप एवेदमग्र आसुः। ता आपः सत्यमसृजन्त। सत्यं ब्रह्म। तद् यत्तत् सत्यमसौ स आदित्यः' इत्यादि।

गायत्री सूर्य की उपासना का प्रथम सोपान है।

गायत्री आदित्य में प्रतिष्ठित है। शंकर के अनुसार गायत्री में जगत् प्रतिष्ठित है। गायत्री जगत् की आत्मा है। आदित्यहृदय इस विचारधारा का समर्थन करते हुए कहा गया है–

नमः सवित्रै जगदेकचक्षुषे जगत्प्रसूतिस्थितिनाशहेतवे।
त्रयीमयाय त्रिगुणात्मधारिणे विरंचिनारायणशंकरात्मने।।

परवर्ती काल में 'सर्व देवमयो रविः' के प्रतिभास के द्वारा सभी सम्प्रदायों को परस्पर निकट लाया गया। महाभारत में युधिष्ठिर ने सूर्य की स्तुति की है–

त्वामिन्द्रमाहुस्त्वं रुद्रस्त्वं विष्णुस्त्वं प्रजापतिः। त्वमग्निस्त्वं मनः सूक्ष्मं प्रभुस्त्वं ब्रह्म शाश्वतम्।।

अर्थात–'सूर्य! आप इन्द्र, रुद्र, विष्णु, प्रजापति, अग्नि, मन, प्रभु और ब्रह्म हैं।'

सूर्यतापिनी–उपनिषद् में उपर्युक्त विचारधारा का समर्थन मिलता है; यथा–

एष ब्रह्मा च विष्णुश्च रुद्र एष हि भास्करः।
त्रिमूर्त्यर्यात्मा त्रिवेदात्मा सर्वदेवमयो रविः।।
प्रत्यक्षं दैवतं सूर्यं परोक्षं सर्वदेवताः।
सूर्यस्योपासनं कार्यं गच्छेद् वै सूर्यसंसदम्।।

आदित्यहृदय के अनुसार एक ही सूर्य तीनों कालों में क्रमशः त्रिदेव बनते हैं। यथा–

उदये ब्रह्मणो रूपं मध्याह्ने तु महेश्वरः।
अस्तमाने स्वयं विष्णुस्त्रिमूर्त्तिश्च दिवाकरः।।

केवल देव ही नहीं, अपितु त्रिपुरसुन्दरी ललितादेवी का ध्यान करने के लिये भी उनका सूर्यमण्डलस्थ–स्वरूप वरणीय है; यथा–

सूर्यमण्डलमध्यस्थां देवीं त्रिपुरसुन्दरीम्।
पाशांकुशधनुर्बाणहस्तां ध्यायेत् सुसाधकः।।

विष्णु के समान उनके आराधन की विधियाँ रही हैं। कुछ पूजा–सम्बन्धी विशेषताएँ भी हैं; जैसे–सूर्य–नमस्कार, अर्घ्यदान आदि। सूर्योदय से सूर्यास्त तक सूर्योन्मुख होकर मन्त्र या स्तोत्र का जप आदित्यव्रत होता है। षष्ठी या सप्तमी तिथियों में दिनभर उपवास करके भगवान् भास्कर की पूजा करना पूर्ण व्रत होता है। पौराणिक धारणा के अनुसार जो–जो पदार्थ सूर्य के लिये अर्पित किये जाते हैं, भगवान् सूर्य उन्हें लाख गुना करके लौटा देते हैं। उस युग में सूर्य की एक दिन की पूजा सैकड़ों यज्ञों के अनुष्ठान से बढ़कर मानी गयी है।
सौर–पुराणों में सूर्य को सर्वश्रेष्ठ देव बतलाया गया है और सभी देवताओं को इन्हीं का स्वरूप कहा है। इन पुराणों के अनुसार भगवान् सूर्य बारम्बार जीवों की सृष्टि और संहार करते हैं। ये पितरों के और देवताओं के भी देवता हैं। जनक, बालखिल्य, व्यास तथा अन्य संन्यासी योग का आश्रय लेकर इस सूर्य–मण्डल में प्रवेश कर चुके हैं। ये भगवान् सूर्य सम्पूर्ण जगत् के माता, पिता और गुरु हैं।
सूर्य के बारह रूप हैं। इनमें से इन्द्र देवताओं के राजा हैं, धाता प्रजापति हैं, पर्जन्य जल बरसाते हैं, त्वष्ठा वनस्पति और ओषधियों में विराजमान हैं, पूषा अन्न में स्थित हैं और प्रजाजनों का पोषण करते हैं, अर्यमा वायु के माध्यम से सभी देवताओं में स्थित हैं, भग देहधारियों के शरीर में स्थित हैं, विवस्वान् अग्रिमें स्थित हैं और जीवों के खाये हुए भोजन को पचाते हैं, विष्णु धर्म की स्थापना के लिये अवतार लेते हैं, अंशुमान् वायु में प्रतिष्ठित होकर प्रजा को आनन्द प्रदान करते हैं, वरूण जल में स्थित होकर प्रजा की रक्षा करते हैं तथा मित्र सम्पूर्ण लोक के मित्र हैं। सूर्य का उपर्युक्त वैशिष्ट्य उन्हें अतिशय लोकपूज्य बना देता है।
सूर्य हजार नामों की कल्पना स्तोत्ररूप में विकसित हुई है। इन्हीं नामों का एक संक्षिप्त संस्करण बना, जिसमें केवल इक्कीस नाम हैं। इसको स्तोत्रराज की उपाधि मिली। इसके पाठ से शरीर में आरोग्यता, धन की वृद्धि और यश की प्राप्ति होती है।
सौर–सम्प्रदाय के अनुयायी ललाट पर लाल चन्दन से सूर्य की आकृति बनाते हैं और लाल फूलों की माला धारण करते हैं। वे ब्रह्मरूप में उदयोन्मुख सूर्य की, महेश्वररूप में मध्याह्न सूर्य तथा विष्णुरूप में अस्तोन्मुख सूर्य की पूजा करते हैं। सूर्य के कुछ भक्त उनका दर्शन किये बिना भोजन नहीं करते। कुछ लोग तपाये हुए लोहे से ललाटपर सूर्य की मुद्रा को अंकित करके निरन्तर उनके ध्यान में मग्र रहने का विधान अपनाते हैं।
भगवान् सूर्य के कुछ उपासक तीसरी शताब्दी में बाहर से भारत में आये। ऐसी जातियों में मगों का नाम उल्लेखनीय है। राजपूताने में मग जाति के ब्राह्मण आजकल भी मिलते हैं। यह जाति मूलतः प्राचीन ईरान की 'मग' जाति है। वहीं से ये भारत में आये। कुशान युग में सूर्य की पूजा–विधि ईरान से भारत में आयी। सूर्य–पूजा का प्रसार प्राचीन काल में एशिया माइनर से रोम तक था। यूनान का सम्राट् सिकन्दर सूर्य का उपासक था।
भारत में सूर्य की पूजा से संबद्ध बहुत–से मन्दिर पाँचवीं शदी के

आरम्भ काल से बनते रहे हैं। इनमें से सबसे अधिक प्रसिद्ध तेरहवीं शदी का कोणार्क सूर्य–मंदिर आज भी वर्तमान है। छटीं सदी से कुछ राजा प्रमुखरूप से सूर्य के उपासक रहे हैं। इनमें हर्षवर्धन और उनके पूर्वजों के नाम प्रसिद्ध हैं।

सौर–सम्प्रदाय का परिचय ब्रह्मपुराण के अतिरिक्त सौर–पुराण से भी मिलता है। ब्रह्मपुराण में सूर्योपासना की प्रमुखता होने से इसका भी नाम सौरपुराण है। सौरपुराण में शैव संप्रदायों का परिचय विशेषरूप से मिलता है। इसमें शिव का सूर्य से तादात्म्य भी दिखलाया गया है। स्वयं सूर्य ने शिव की उपासना को श्रेयस्कर कहा है।

अकबर ने आदेश निकाला था। 'प्रातः, मध्याह्न, सायं और अर्द्धरात्रि–चार बार सूर्य की पूजा होनी चाहिए। वह स्वयं सूर्य के अभिमुख होकर उनके सहस्र नाम का पाठ एवं पूजन करता था। इसके पश्चात् दोनों कानों का स्पर्श करके चक्राकार घूमता और अपनी अंगुलियों से कर्णपाली को पकड़ता था। वह अन्य विधियों से भी सूर्य की पूजा करता था। जहाँगीर भी सूर्य का आदर करता था। उसने अकबर के द्वारा सम्मानित सौर–संवत् को राजकीय आय–व्यय की गणना के लिये प्रचलित रखा था।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. ऋग्वेद– 5/82/1
2. श्रीमद्भगवद्गीता, 4/1।
3. बृहदारण्यकोपनिषद्, 5/5/2
4. सत्यं तातान सूर्यः । (ऋग्वेद 1 (105) 12)
5. ब्रह्मपुराण, अध्याय 29
6. पुराण–परिशीलन– पृ0 223
7. वैदिक विज्ञान और संस्कृति पृ0 17
8. आदित्य हृदय स्तोत्र
9. श्रीमद्भागवत– 5120148–46
10. हिन्दी ऋग्वेद की भूमिका, पं0 राम गोविन्द त्रिवेदी
11. प्राचीन भारत का इतिहास डॉ0 भगवत पृ0 15, शरण उपाध्याय–(पृ0 306)